IJAER/June-July 2014/Volume-3/Issue-4 ISSN: 2278-9677
International Journal of Arts & Education Research

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में "कामायनी" की प्रासंगिकता

डॉ लोकेश कुमार शर्मा

एसोसिएट प्रोफेसर , राजकीय महाविद्यालय

टोंक, राजस्थान

सार

'कामायनी' निश्चय ही छायावाद की सर्वश्रेष्ठ रचना कही जा सकती है। कामायनी पर्णतः मानव मन एवं दर्शन से परिपर्ण काव्य है। इसमें अभिव्यक्त जीवन-दर्शन के माध्यम से आधुनिक मानव को अपना जीवन सुखी बनाने हेतु दिशा-निर्देश दिए गये है और आधुनिक जीवन की प्रमुख समस्या का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास कवि ने किया है।

मूलशब्द: *वर्तमान, कामायनी*

परिचय

जयशंकर प्रसाद छायावादी युग के प्रतिनिधि कवि है। छायावादी काव्यधारा में उनका अग्रगण्य स्थान माना जाता है। इनका जन्म वाराणसी के प्रसिद्ध वैश्य परिवार 'सुंघनी साहू के यहाँ 1889 में हुआ। बाल्यकाल से ही ये काव्य प्रतिभा के धनी थे, तथा अल्पायु में ही काव्य-रचना करने लगे थे। इनकी प्रारंभिक रचनाएँ ब्रजभाषा मे हैं, परन्तु समय के साथ-साथ इनकी रचना दृष्टि परिष्कृत एवं परिमार्जित होती गई। एवं इसकी परिकल्पना 'कामायनी' नामक महाकाव्य के रूप में अपनी पर्ण गरिमा और सौन्दर्य के साथ साकार हुई।

'कामायनी' निश्चय ही छायावाद की सर्वश्रेष्ठ रचना कही जा सकती है। कामायनी पर्णतः मानव मन एवं दर्शन से परिपर्ण काव्य है। इसमें अभिव्यक्त जीवन-दर्शन के माध्यम से आधुनिक मानव को अपना जीवन सुखी बनाने हेतु दिशा-निर्देश दिए गये है और आधुनिक जीवन की प्रमुख समस्या का समाधान प्रस्तुत करने का प्रयास कवि ने किया है। साहित्यिक कृतियाँ कभी अप्रासंगिक नहीं होती, वे शिक्षाप्रद होने के साथ लोक-कल्याण विधायक होती है। और उसमे घटनाओ के माध्यम से मानव को सदेंश दिया जाता है। कामायनी भी इसका अपवाद नहीं है, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितनी अपनी रचना काल मे थी।

आधुनिक मानव के पास धन सम्पत्ति की प्रचुरता तो है किन्तु उसके जीवन में चैन नहीं है। जीवन का सुख उसके लिए आकाशकुसुमवत है। आज विज्ञान के पर्याप्त उन्नति कर करली है, जीवन में सुख-सुविधा के साधन उपलब्ध है किन्तु चैन उसे अभी तक प्राप्त नहीं हुआ है।

कामायनी की कथा का प्रारम्भ एक भयंकर जल प्रलय से होता है, जिसमें समग्र देवजाति और उसका वैभव नष्ट हो गया, केवल मनु शेष बच गये क्योंकि वे उस समय नाव में थे। देवजाति ने अपने जीवन में सुख-सुविधाओं के अनेक साधन एकत्र कर लिये थे, जिसके कारण वे अकर्मव्य, अहंकारी एव भाग विलासी हो गये थे। व इतने दम्भी हो गए कि अपने आपको अमर समझने लगे थे। नियति ने उन्हें प्रलय के माध्यम स दण्ड दिया और उनका सब कुछ नष्ट हो गया। इस घटना के माध्यम से प्रसाद जी ने आधुनिक मानव को यह सदेश दिया है कि भौतिक समृद्धि प्राप्त कर लनो जीवन का लक्ष्य नहीं है। भौतिक समृद्धि अन्ततः हमें विनाश की ओर प्रेरित करती है, और हम देवताओ की भाँति अकर्मण्य और अहंकारी बन जाते है जिसका दुष्परिणाम हमे विनाश के रूप में झेलना पड़ता है। इसलिए मनु सोच रहे है-

अमरते!

"मौन नाश विध्वसं अंधेरा, ।

शून्य बना जो प्रकट अभाव। वही सत्य है अरी तुझको यहाँ कहाँ अब ठांव ।। "

प्रसादजी ने मृत्यु को जीवन का अंतिम सत्य माना हैं, मृत्यु की गोद में व्यक्ति को चिरशांति प्राप्त होती है। जीवन तो क्षणिक है, जो क्षण भर के लिए चमकता है-

"जीवन तेरा क्षुद्र अंश है,

व्यक्त नील धनमाला मे । सौदामिनी सधि

सा सुन्दर, क्षण भर रहा उजाला में ।।"

मनु जीवन से हताश हो गया, उसे लगता है, कि यह संसार नश्वर है, अतः वे अकर्मण्य हो जाते हैं, और वह समझते है कि जीवन की समस्याओ का समाधान नहीं हो सकता और व्यक्ति को कभी सफलता मिल ही नहीं सकती-

" किन्तु जीवन कितना निरूपाय, लिया है देख, नहीं संदेह ।

निराशा हैं जिसका परिणाम,

सफलता का वह कल्पित गेह ।।'

प्रसाद जी कहते है कि पलायनवादी प्रवृत्ति ही मनुष्य को अकर्मण्य बनाती है । इसे दूर करने के लिए प्रसाद जी ने श्रद्धा के द्वारा मनु को संसार की सत्यता का बोध कराया उन्हे अकर्मण्य न बनने की प्रेरणा दी । वस्तुतः प्रसादजी ने जिस समय कामायनी की रचना की, उस समय देश में स्वतन्त्रता संग्राम चल रहा था तथा देश को ऐसे नवयुवकों की आवश्यकता थी जो स्वतन्त्रता की देवी पर अपने जीवन का बलिदान दे सकें। इसलिए कामायनी मे प्रवृत्तिमार्गी जीवन दर्शन का संदेश दिया गया है। इसलिए श्रद्धा मनु से कहती है-

"काम मगंल स मण्डित श्रेय, सर्ग इच्छा का है परिणाम ।

तिरस्कृत कर उसको तुम भूल, बनाते हो असफल भव धाम ।।"

निश्चय ही कामायनी हमें सतत् जागरूक बनाकर कर्मण्यता की प्रेरणा देती है ।

प्रसादजी ने कामायनी में बताया है कि जीवन में आनन्द की प्राप्ति तभी हो सकती है, जब व्यक्ति हृदय और बुद्धि का सतुंलित समन्वय करे । बहुत अधिक भावुक और सिर्फ बुद्धि से भी आनन्द प्राप्त नहीं होता है । व्यक्ति को आनन्द तभी प्राप्त हो सकता है जब वह अपने जीवन में हृदय और बुद्धि की समरसता का सचार करता है। इसलिए प्रसाद जी ने कहा है कि करने की आवश्यकता है और प्रत्येक मनुष्य समरसता ता ओर समरसता को पुनः स्मरण है प्रसादजी जी के अनुसार-

नित्य समरसता का अधिकार, उमड़ता कारण जलधि समान ।

व्यथा से नीली लहरों बीच, बिखरते सुख मणि गण द्युतिमान । । "

प्रसाद जी का मत है कि जहाँ विषमता है, वहाँ समरसता नहीं है और जहाँ समरसता है, वहाँ विषमता का कोई अस्तित्व नहीं है । वर्तमान कालीन विषमताओ से मुक्ति पाने के लिए प्रसाद जी ने कामायनी मे जो समाधान प्रस्तुत किए है वह न केवल दर्शन का विषय है, अपितु व्यवहारिक रूप में प्रस्तुत होने के कारण अत्यन्त उपयोगी बन पड़ा है। प्रसाद जी ने सभी क्षेत्रों में समरसता स्थापित करने पर जोर दिया है। सुख और दुख की समरसता, हृदय और बुद्धि की समरसता तथा इच्छा, ज्ञान एवं क्रिया की समरसता करने पर ही जीवन में आनन्द की उपलब्धि होती है बिडम्बना यह है कि इन तीनों में समन्वय नहीं हो पाता और जीवन दुःखी रहता है-

"ज्ञान दूर कुछ क्रिया भिन्न है, इच्छा क्यों पूरी हो मन की। एक दूसरे से न मिल सके, यह विडम्बना है जीवन की । ।"

व्यक्ति यदि आनन्द प्राप्त करना चाहता है तो निश्चय ही उसके इच्छा, ज्ञान और क्रिया का सामजस्य अपने जीवन में करना पडगो ।

प्रसादजी कहते हैं कि मानवता के विकास में चाहे कितनी भी बाधाएँ क्यों न आये, उसे उन बाधाओ पर विजय प्राप्त करनी है । पराजित होने पर साहस नहीं खोना है । निरन्तर दुगने साहस से सफलता की ओर आगे बढ़ना है। परमात्मा का यह मंगल वरदान सर्वत्र गूँज रहा है । कि शक्तिशाली बनकर विजय श्री का वरण करो यहीं कामायनी का संदेश है-

" और यह क्या तुम सुनते नहीं, विधाता का मंगल वरदान ।

शक्तिशाली हो, विजयी बनो, विश्व में गूँज रहा विजयगान । ।"

शक्ति के कण इधर-उधर बिखरे हुए है, मानव को उनका समन्वय करना होगा तभी मानवता की जय होगी।

"शक्ति के विद्युतकण जो व्यस्त, विकल बिखरे हैं हो निरूपाय ।

समन्वय उनका करे समस्त, विजयिनी मानवता हो जाय । ।"

आधुनिक समय मे आज जब मनुष्यता अस्तित्व सम्बन्धी सकंट स े जूझ रही है तो कामायनी का ये संदेश अत्यन्त समीचीन जान पडता है-

"औरो को हंसते देखे मनु, हसों और सुख पाओ ।

अपने सुख को विस्मृत कर लो, और सबको सुखी बनाओ ।"

इस प्रकार श्रद्धा उनके विश्वासी मन को कर्मशील बनाती है, इसका चित्रण करते हुए महाकवि प्रसाद ने लिखा है-

"डरो मत अरे अमृत संतान, अग्रसर है मंगलमय बृद्धि पर्ण आकर्षण जीवन केन्द्र खिंची आवगी सकल समृद्धि।।"

कामायनी का वास्तविक प्रासंगिकता इन्हीं अर्थों में निहित है ।

प्रसाद जी की यह रचना वस्तुतः मानवता का मूर्त रूप कही जा सकती है।

प्रसाद जी के शब्दों में "हम यही मंगल कामना कर सकते है कि मानव धर्म वं समरसता का पालन करते हुए निरंतर उन्नति को प्राप्त हो"

कथानक

मानव के अग्रजन्मा देव निश्चिंत जाति के जीव थे। किसी भी प्रकार की चिंता न होने के कारण वे 'चिर-किशोर-वय' तथा 'नित्यविलासी' देव आत्म-मंगल-उपासना में ही विभोर रहते थे। प्रकृति यह अतिचार सहन न कर सकी और उसने अपना प्रतिशोध लिया। भीषण जलप्लावन के परिणामस्वरूप देवसृष्टि का विनाश हुआ, केवल मनु जीवित बचे। देवसृष्टि के विध्वंस पर जिस मानव जाति का विकास हुआ उसके मूल में थी 'चिंता', जिसके कारण वह जरा और मृत्यु का अनुभव करने को बाध्य हुई। चिंता के अतिरिक्त मनु में दैवी और आसुरी वृत्तियों का भी संघर्ष चल रहा था जिसके कारण उनमें एक ओर आशा, श्रद्धा, लज्जा और इड़ा का आविर्भाव हुआ तो दूसरी ओर कामवासना, ईर्षा और संघर्ष की भी भावना जगी। इन विरोधी वृत्तियों के निरंतर घात-प्रतिघात से मनु में निर्वेद जगा और श्रद्धा के पथप्रदर्शन से यही निर्वेद क्रमश: दर्शन और रहस्य का ज्ञान प्राप्त कर अंत में आंनद की उपलब्धि का कारण बना। यह चिंता से आनंद तक मानव के मनौवैज्ञानिक विकास का क्रम है। साथ ही मानव के आखेटक रूप में प्रारंभ कर श्रद्धा के प्रभाव से पशुपालन, कृषक जीवन और इड़ा के सहयोग से सामाजिक और औद्योगिक क्रांति के रूप में भौतिक विकास एवं अंत में आध्यात्मिक शांति की प्राप्ति का उद्योग मानव के सांस्कृतिक विकास के विविध सोपान हैं। इस प्रकार कामायनी मानव जाति के उद्भव और विकास की कहानी है।

प्रसाद ने इस काव्य के प्रधान पात्र 'मनु' और कामपुत्री कामायनी 'श्रद्धा' को ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में माना है, साथ ही जलप्लावन की घटना को भी एक ऐतिहासिक तथ्य स्वीकार किया है। शतपथ ब्राह्मण के प्रथम कांड के आठवें अध्याय से जलप्लावन संबंधी उल्लेखों का संकलन कर प्रसाद ने इस काव्य का कथानक निर्मित किया है, साथ ही उपनिषद् और पुराणों में मनु और श्रद्धा का जो रूपक दिया गया है, उन्होंने उसे भी अस्वीकार नहीं किया, वरन् कथानक को ऐसा स्वरूप प्रदान किया जिसमें मनु, श्रद्धा और इड़ा के रूपक की भी संगति भली भाँति बैठ जाए। परंतु सूक्ष्म सृष्टि से देखने पर जान पड़ता है कि इन चरित्रों के रूपक का निर्वाह ही अधिक सुंदर और सुसंयत रूप में हुआ, ऐतिहासिक व्यक्ति के रूप में वे पूर्णत: एकांगी और व्यक्तित्वहीन हो गए हैं।

मनु मन के समान ही अस्थिरमति हैं। पहले श्रद्धा की प्रेरणा से वे तपस्वी जीवन त्याग कर प्रेम और प्रणय का मार्ग ग्रहण करते हैं, फिर असुर पुरोहित आकुलि और किलात के बहकावे में आकर हिंसावृत्ति और स्वेच्छाचरण के वशीभूत हो श्रद्धा का सुख-साधन-निवास छोड़ झंझा समीर की भाँति भटकते हुए सारस्वत प्रदेश में पहुँचते हैं; श्रद्धा के प्रति मनु के दुर्व्यवहार से क्षुब्ध काम का अभिशाप सुन हताश हो किंकर्तव्यविमूढ़ हो जाते हैं और इड़ा के संसर्ग से बुद्धि की शरण में जा भौतिक विकास का मार्ग अपनाते हैं। वहाँ भी संयम के अभाव के कारण इड़ा पर अत्याचार कर बैठते हैं और प्रजा से उनका संघर्ष होता है। इस संघर्ष में पराजित और प्रकृति के रुद्र प्रकोप से विक्षुब्ध मनु जीवन से विरक्त हो पलायन कर जाते हैं और अंत में श्रद्धा के पथप्रदर्शन में उसका अनुसरण करते हुए आध्यात्मिक आनंद प्राप्त करते हैं। इस प्रकार श्रद्धा—आस्तिक्य भाव—तथा इड़ा—बौद्धिक क्षमता—का मनु के मन पर जो प्रभाव पड़ता है उसका सुंदर विश्लेषण इस काव्य में मिलता है।

सर्ग

कामायनी १५ सर्ग (अध्यायों) का महाकाव्य है। ये सर्ग निम्नलिखित हैं-

1. चिन्ता 2. आशा 3. श्रद्धा 4. काम 5. वासना 6. लज्जा 7. कर्म 8. ईर्ष्या 9. इड़ा (तर्क, बुद्धि) 10. स्वप्न 11. संघर्ष 12. निर्वेद (त्याग) 13. दर्शन 14. रहस्य 15. आनन्द।

सूत्र :- (१) चिंता की आशा से श्रद्धा ने काम वासना को लज्जित किया। (२) कर्म की ईर्ष्या से बुद्धि/तर्क ने स्वप्न में संघर्ष किया। (३) निदरआ (निद्रा)/ मोह माया का त्याग कर ईश्वरीय दर्शन द्वारा रहस्यमय आनंद की प्राप्ति होगी।

मूल संवेदना

काव्य रूप की दृष्टि से कामायनी चिंतनप्रधान है, जिसमें कवि ने मानव को एक महान् संदेश दिया है। 'तप नहीं, केवल जीवनसत्य' के रूप में कवि ने मानव जीवन में प्रेम की महत्ता घोषित की है। यह जगत् कल्याणभूमि है, यही श्रद्धा की मूल स्थापना है। इस कल्याणभूमि में प्रेम ही एकमात्र श्रेय और प्रेय है। इसी प्रेम का संदेश देने के लिए कामायनी का अवतार हुआ है। प्रेम मानव और केवल मानव की विभूति है। मानवेतर प्राणी, चाहे वे चिरविलासी देव हों, चाहे देव और प्राण की पूजा में निरत असुर, दैत्य और दानव हों, चाहे पशु हों, प्रेम की कला और महिमा वे नहीं जानते, प्रेम की प्रतिष्ठा केवल मानव ने की है। परंतु इस प्रेम में सामरस्य की आवश्यकता है। समरसता के अभाव में यह प्रेम उच्छृंखल प्रणयवासना का रूप ले लेता है। मनु के जीवन में इस सामरस्य के अभाव के कारण ही मानव प्रजा को काम का अभिशाप सहना पड़ रहा है। भेद-भाव, ऊँच-नीच की प्रवृत्ति, आडंबर और दंभ की दुर्भावना सब इसी सामरस्य के अभाव से उत्पन्न होती हैं जिससे जीवन दु:खमय और अभिशापग्रस्त हो जाता है। कामायनी में इसी कारण समरसता का आग्रह है। यह समरसता द्वंद्व भावना में सामंजस्य उपस्थित करती है। संसार में द्वंद्वों का उद्गम शाश्वत तत्व है। फूल के साथ काँटे, भाव के साथ अभाव, सुख के साथ दु:ख और रात्रि के साथ दिन नित्य लगा ही रहता है। मानव इनमें अपनी रुचि के अनुसार एक को चुन लेता है, दूसरे को छोड़ देता है और यही उसके विषाद का कारण है। मानव के लिए दोनों को स्वीकार करना आवश्यक है, किसी एक को छोड़ देने से काम नहीं चलता। यही द्वंद्वों की समन्वय स्थिति ही सामरस्य है। प्रसाद ने हृदय और मस्तिष्क, भक्ति और ज्ञान, तप, संयम और प्रणय, प्रेम, इच्छा, ज्ञान और क्रिया सबके समन्वय पर बल दिया है।

निष्कर्ष

निष्कर्ष रूप मे कहा जा सकता है कि कामायनी में प्रसाद जी ने आधुनिक मानव को सदेंश दिया है तथा विश्व कल्याण की भावना को अभिव्यक्ति दी है । निश्चय ही कामायनी आधुनिक युग का ऐसा महाकाव्य है, जो सदैव मानव जीवन के लिए प्रेरणा बनकर रहेगा ।

संदर्भ ग्रन्थ सची-

1. जयशंकर प्रसाद : कामायनी

2. डॉ0 हरि शर्मा : कामायनी विमर्श

3. श्री राकेश : प्रसाद और कामायनी (श्रद्धा सर्ग)

4. जयशंकर प्रसाद : कामायनी की भूमिका